इकाई 2 निरुक्त का प्रयोजन एवं उसका प्रतिपाद्य

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 वेदाङ्ग निरुक्तशास्त्र :एक परिचय

2.3 निरुक्त का प्रयोजन

- 2.3.1 प्रथम प्रयोजन : मन्त्रार्थ का ज्ञान
- 2.3.2 द्वितीय प्रयोजन : पदपाठ का ज्ञान
- 2.3.3 तृतीय प्रयोजन : वैदिक देवताओं का स्वरूपबोध

2.4 निरुक्त का प्रतिपाद्य

- 2.4.1 पदविभाग

2.5 निर्वचन सिद्धान्त

2.6 कतिपय महत्वपूर्ण पदों का निर्वचन

- 2.6.1 निघण्टु– निघण्टवः कस्मात् – निघण्टु को निघण्टु क्यों कहा जाता हैं?
- 2.6.2 गौ– गौः कस्मात् – गौ को गौ क्यों कहते हैं?
- 2.6.3 आचार्यः–आचार्यः कस्मात्–आचार्य को आचार्य क्यो कहते है?
- 2.6.4 समुद्रः कस्मात् – समुद्र को समुद्र क्यों कहते हैं ?
- 2.6.5 अग्निः – अग्निः कस्मात् – अग्नि को अग्नि क्यों कहते हैं?

2.7 निरुक्त में वर्णित वेदार्थ पद्धति

- 2.7.1 याज्ञिक
- 2.7.2 ऐतिहासिक तथा आख्यान
- 2.7.3 नैरुक्त
- 2.7.4 अधिदैवत
- 2.7.5 परिव्राजक तथा अध्यात्म
- 2.7.6 वैयाकरण
- 2.7.7 विधि

2.8 निरुक्त में देवताओं का स्वरूप

2.9 सारांश

2.10 पारिभाषिक शब्दावली

2.11 सन्दर्भग्रन्थ –सूची

2.12 बोध प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के पश्चात् आप –

- वेदाङ्ग निरुक्तशास्त्र एवं उससे सम्बन्धित आचार्यों से भली–भाँति परिचित हो जाएंगे।
- निरुक्त शास्त्र के सभी प्रयोजनों से अवगत हो जाएंगे।

- नाम, आख्यात, उपसर्गएवं निपात इन चारों पद–विभागों एवं भाव के छह विकारों को समझ जायेंगे।
- निर्वचन के सभी सिद्धान्तों से अवगत हो जाएंगे।
- वैदिक देवताओं के स्वरूप से परिचित हो जाएंगे।
- महत्वपूर्ण वैदिक आख्यानों से अवगत हो जायेंगे।

2.1 प्रस्तावना

आप जानते हैं कि, वेदाङ्ग में दो शब्द हैं – वेद और अङ्ग। वेद के अन्तर्गत ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद अपने–अपने मन्त्रभाग, ब्राह्मणग्रन्थ, आरण्यकएवं उपनिषदों के साथ आते हैं तथा अङ्ग उन्हें कहते हैं – जिनके द्वारा किसी वस्तु के स्वरूप को जानने में सहायता प्राप्त होती है। इसलिए सम्पूर्ण वेद का अर्थ जानने में तथा उनमें वर्णित यज्ञादि–अनुष्ठानों को सम्पन्न कराने में जो शास्त्र उपयोगी हैं, उन्हें वेदाङ्ग कहते हैं। वेद मन्त्रों के शुद्ध उच्चारणएवं वास्तविक अर्थ–ज्ञान के लिए आचार्यों ने इन वेदाङ्गों का निर्माण किया था। इनके छह अङ्गों शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दस् और ज्योतिष में निरुक्त श्रोत्र–स्थानीय है क्योंकि इसके अध्ययन के बिना मनुष्य कानों के रहते हुए भी वेद में स्थित अर्थ को जानने और समझने की दृष्टि से बधिर ही है। जन–साधारण को मन्त्रों में स्थित केवल भौतिक अर्थ का ही बोध होता है, लेकिन उन्हें मन्त्रों में स्थित आधिदैविक और आध्यात्मिक–अर्थ का ज्ञान नहीं हो पाता। इसलिए वेदार्थ को ठीक से समझने के लिए निरुक्त का अध्ययन आवश्यक है। आचार्य सायण ने निरुक्त के दो लक्षण बतायें हैं। पहले लक्षण के अनुसार–शब्दों से अर्थ निकालने के लिए पदों के समूह का जहाँ स्वतन्त्ररुप से कथन किया गया है, उस वेदाङ्ग का नाम निरुक्त है। (अर्थावबोधे निरपेक्षतया पदजातं यत्र उक्तं तन्निरुक्तम्) तथा दूसरा लक्षण कहता है कि–एक–एक पद के सम्भावित अवयवार्थ धातु और प्रत्यय के अर्थ जहाँ पूर्णरूप से बताये गए हैं, वह भी निरुक्त है।(एकैकस्य पदस्य सम्भाविता अवयवार्थ यत्र निःशेषेण उच्यन्ते तदपि निरुक्तम्) इन दोनों लक्षणों से यह स्पष्ट है कि वेद मन्त्रों के वास्तविक अर्थ को समझने के लिए निरुक्त के रूप में शब्दों का निर्वचन करने की आवश्यकता पड़ी।

2.2 वेदाङ्ग निरुक्तशास्त्र : एक परिचय

निरूक्त शब्द का अर्थ है–व्युत्पत्ति। प्रत्येक शब्द में कोई न कोई क्रिया निहित होती है, इस आधार पर शब्द का निर्वचन करना निरुक्ति है। इसलिए निर्वचनशास्त्र को निरुक्त कहते हैं। यह कठिन और महत्वपूर्ण वैदिक शब्दों की व्याख्या करता है। निरुक्त जिन वैदिक शब्दों की व्याख्या करता है, निघण्टु में उन्ही शब्दों का संकलन है। प्राचीन काल से ही आचार्यों के मध्य निघण्टु–ग्रंथों की संख्या को लेकर मतभेद है, परन्तु वे इस बात परएकमत हैं कि वर्तमान मेंएक ही निघण्टु ग्रंथ उपलब्ध है, जिस पर आचार्य यास्क ने निरुक्त नामक टीका लिखी है। निरुक्तशास्त्र में भाषा विज्ञान के आधारभूत सिद्धांत मिलते हैं इसलिए आधुनिक तुलनात्मक भाषा विज्ञान का यह आधार ग्रंथ कहा गया है। वेदांग साहित्य में निरुक्त शब्द का प्रयोग किसी ग्रंथ विशेष के लिए न होकरएक शास्त्र के रूप में हुआ है। प्राचीन काल में निरुक्तशास्त्र से संबंधित अनेक ग्रंथ विद्यमान थे, जिनका परिचय वैदिक–मंत्रों से संबंधित भाष्यों में प्राप्त होता है। यास्क ने भी अनेक आचार्यों के नामएवं उनके सिद्धान्तों का उल्लेख अपने निरुक्त में किया है। उन्होने कुल बारह अन्य निरुक्तकारों के नाम से उनके मतों का परिचय

दिया है। इन आचार्यों के नाम हैं – अग्रायण, औपमन्यव, औदुम्बरायण, औणर्वाभ, कात्थक्य, क्रौष्टुकि, गार्ग्य, गालव, तैटीकि, वार्ष्यायणि, शाकपूणि, स्थौलाष्टीवि आदि।

वर्तमान में यास्क रचित निरुक्त इस शास्त्र का प्रतिनिधि ग्रंथ है। इस निरुक्त में कुल बारह अध्याय हैं, इसके अतिरिक्त दो अध्याय परिशिष्ट रूप में है। इस प्रकार यास्क का निरुक्त कुल 14 अध्यायों में विभक्त है। निरुक्तएवं व्याकरण में यह अन्तर है कि व्याकरण नामक वेदाङ्ग जहाँ शब्दों की शुद्धि और अशुद्धि पर विचार करता है, शब्द–रचना के लिए धातु और प्रत्यय का विभाजन तथा शब्दों के लिंग, वचन, कारक आदि पर विचार करता है, वहीं निरुक्त नामक वेदाङ्ग अर्थबोध की प्रक्रिया पर विचार करता है। इस प्रकार अपने प्रतिपाद्य के कारण निरुक्त और व्याकरण का अत्यन्तघनिष्ठ संबंध है लेकिन व्याकरण केवल उन्हीं शब्दों का निर्वचन करता है जिनमें क्रिया प्रत्यक्ष होती है जबकि निरुक्त परोक्ष क्रियायुक्त शब्दों के भी अर्थ ढूंढने की चेष्टा करता है। वह सभी शब्दों में व्याकरण के धातुएवं प्रत्ययों को सुनिश्चित करने के अतिरिक्त ध्वनि नियमोंएवं लोक–प्रवृत्ति का आश्रय लेकर नवीन धातुओं की कल्पना करता है तथा शब्द को देखकर उसमें धातु–प्रत्यय आदि के उहन या कल्पना की पद्धति बताता है।

निरुक्तकार यास्क आचार्य पाणिनि से प्राचीन हैं। इस बात का प्रमाण निरुक्त साहित्य में उपलब्ध है। यास्क ने जिस भाषा का प्रयोग किया है वह पाणिनिग्रन्थ – अष्टाध्यायी के नियमों से प्राचीन है। महाभारत में भी यास्क का नामोल्लेख है, जिसके आधार पर यास्क का समय 700–800 वर्ष विक्रम पूर्व निश्चित होता है। ग्रन्थ के प्रारंभ में ही यास्क ने वेदार्थानुशीलन सम्बन्धी अनेक सम्प्रदायों की चर्चा की है जो वेद–मन्त्रों की विविध प्रकार से व्याख्या करते हैं। उनकी व्याख्या पद्धति को आधिदैवत, अध्यात्म, आख्यानसमय,ऐतिहासिक, नैदान, नैरुक्त, परिव्राजक तथा याज्ञिक आदि नामों से जाना जाता है। यास्क के चिन्तनएवं सिद्धान्तों का बहुत अधिक प्रभाव परवर्ती वेदभाष्यकारों पर पड़ा है। सायण ने यास्कीय पद्धति का आश्रय लेकर ही लगभग सभी वेदों का भाष्य किया है। यास्क का निरुक्त स्वयं निघण्टु नामक ग्रन्थ की टीका है किन्तु उसकी व्याख्या पद्धति को उचित ढंग से समझने के लिए अनेक आचार्यों द्वारा उस पर टीका लिखी गई है। वर्तमान में निरुक्त पर दुर्गाचार्य–वृत्ति प्राप्त होती है। निरुक्त कीएक पाण्डित्यपूर्ण टीका स्कन्दमहेश्वर द्वारा लिखी गई है।एक और निरुक्त विषयिनी टीका **'निरुक्त निचय'** के नाम से प्राप्त होती है जिसके रचनाकार वररुचि नामक आचार्य हैं। यह निरुक्त की साक्षात् व्याख्या नहीं है बल्कि निरुक्त के सिद्धान्तों की 100 श्लोकों में स्वतन्त्र व्याख्या है।

2.3 निरुक्त का प्रयोजन

निरुक्त की प्रधान प्रयोजन वेद के वास्तविक अर्थ का अनुसन्धान करना है। अतः वैदिक शब्दों का अर्थ निर्धारण निर्वचन का प्रधान लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ही निरुक्तशास्त्र की रचना हुई थी। यास्क निरुक्त के प्रथम अध्याय के पाँचवे पाद में उक्त प्रयोजनों का उल्लेख करते हैं–

2.3.1 प्रथम प्रयोजन : मन्त्रार्थ का ज्ञान

निरुक्त का प्रयोजन मन्त्रों का अर्थज्ञान कराना है। मन्त्रों के अर्थ का ज्ञान उनमें प्रयुक्त पदों के ज्ञान के बिना सम्भव नहीं है। इसी कारण निरुक्त में पदों के अर्थ निर्धारण की पद्धति बतलायी गई है। यास्क के अनुसार निरुक्त का प्रमुख प्रयोजन मन्त्रार्थ का

अवबोध करना है। इस तथ्य को स्थापित करने के लिए वे पूर्वपक्षी के रूप में इस मत के विरुद्ध तर्कों को प्रस्तुत करते हैं पुनः सिद्धांत के रूप में मन्त्रों को सार्थक सिद्ध करते हुए निरुक्त की आवश्यकता पर बल देते हैं।

2.3.2 द्वितीय प्रयोजन : पदपाठ का ज्ञान

मन्त्रों का सम्यक् रूप से पदपाठ करने के लिए निरुक्त के ज्ञान की महती आवश्यकता है। मन्त्रों में प्रयुक्त पदों के अर्थज्ञान के अभाव में पदपाठ सम्भव नहीं है। पदों में स्थित अर्थ का ज्ञान निरुक्त ज्ञान के बिना सम्भव नहीं है। इसलिए निरुक्त के अध्ययन का दूसरा प्रयोजन मन्त्रों में पदपाठ को उचित ढ़ग से करने की क्षमता विकसित करना है।

2.3.3 तृतीय प्रयोजन : वैदिक देवताओं का स्वरूपबोध

यास्क कहते हैं कि मन्त्रों में अनेक देवताऐसे हैं जिनके चिह्न मन्त्रों में विद्यमान हैं, उन्हे देखकर मन्त्र के देवता का ज्ञान हो जाता है किन्तु जिन मन्त्रों में देवताओं के किसी भी चिह्न का उल्लेख नहीं है,ऐसी स्थिति में उस मन्त्र का देवता सम्बन्धी निर्णय करने के लिए निरुक्त के अध्ययन की आवश्यकता है। संहिताओ में बहुत से मन्त्रऐसे भी हैं जिनमें चिह्न किसी और देवता का दिखाई पड़ता है किन्तु मन्त्र का देवता कोई अन्य ही है। इस प्रकार की दृष्टिकुशलता का विकास निरुक्त ज्ञान से ही सम्भव है।

यास्क कहते हैं कि निरुक्त का अन्य प्रयोजन यह है कि इसके अध्ययन से व्यक्ति वेदार्थ ज्ञान में निपुण हो जाता है। वैदिक समाज में उसके ज्ञान की प्रशंसा होती है और जो व्यक्ति निरुक्त का अध्ययन नहीं करता उसकी निन्दा होती है। इसलिए भी निरुक्त का अध्ययन करना चाहिए।

2.4 निरुक्त का प्रतिपाद्य

निरुक्त का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है –निर्वचन। यास्क ने निघण्टु में संकलित पदों का निर्वचन किया है। इस कार्य को करने के साथ ही कुछ विशिष्ट मन्त्रों की व्याख्या भी की है । उनके द्वारा व्याख्या सम्पन्न मन्त्रों की संख्या लगभग 600 है। शेष वेद–मन्त्रों की व्याख्या में उन्हीं मन्त्रों की व्याख्या पद्धति के अनुसरण का निर्देश दिया है। जिस निघण्टु पर यास्क ने भाष्य की रचना की है। वह पाँच अध्यायों में बँटा है। जिसमें कुल 1341 शब्दों का संग्रह है। प्रथम तीन अध्याय नैघण्टुक – काण्ड कहलाते हैं तथा चौथा अध्याय नैगम अथवाऐकपदिक काण्ड कहलाता है। पाँचवें अध्याय का नाम दैवत काण्ड है।ऐकपदिक श्रेणी में 279 उन पदों का संकलन है, जिनके धातुओं का पता नहीं है। निघण्टु का प्रथम शब्द गो और अन्तिम शब्द देवपत्नी है। निरुक्त इसी निघण्टु के पदों का निर्वचन है। यास्क ने निघण्टु के 230 शब्दों की धातु के अर्थ के अनुसार व्याख्या की है और साथ में बहुत से पदों की व्युत्पत्तियाँ भी दी हैं। इसमें कुल 1771 शब्दों के निर्वचन उपलब्ध होते हैं। यास्क ने निघण्टु शब्द का बहुवचन मे प्रयोग किया है। इससे ज्ञात होता है कि अनेक निघण्टु उस समय प्रचलित थे । इस समय निघण्टु के अतिरिक्त वैदिक शब्दों काएक और संकलन अथर्ववेदीय परिशिष्ट के रुप में प्राप्त है। इसमें रोदसी प्रथम शब्द है, जिसके बारह पर्याय दिए गए हैं। यास्क के निरुक्त से सम्बन्धित निघण्टु की रचना किसने की है, इस विषय पर आचार्यों में मतभेद है। यास्क ने स्वयं अपने निरुक्त में अनेक निघण्टुओंएव निरुक्त रचनाकारों का उल्लेख किया है। निघण्टुओं में शाकपूणि का निघण्टु सबसे प्रसिद्ध है। प्रसिद्ध निरुक्तकार दुर्गाचार्य के अनुसार उपलब्ध निघण्टुओं का संकलन अनेक ऋषियों द्वारा

किया गया है। महाभारत में प्रजापति कश्यप को निघण्टु का रचयिता कहा गया है।एक अन्य आचार्य मधुसूदन सरस्वती यास्क को ही निघण्टु के पदों का संकलनकर्ता मानते हैं। निरुक्त की प्रथम पंक्ति है– समाम्नातः स व्याख्यातव्यः, इसका अर्थ है कि यास्क ने पहले वैदिक शब्दों को चुन–चुन केएकत्र किया, फिर उन चुने हुए शब्दों का निर्वचन (व्याख्या) किया। मन्त्रार्थज्ञान और देवविद्या के साथ पदों का निर्वचन निरुक्त का मुख्य वर्ण्य विषय है। निघण्टु में संकलित शब्दों के निर्वचन के प्रसगं में यास्क ने वे मन्त्र अथवा मन्त्रांश लिए हैं जिनके शब्दों का उनके द्वारा निर्वचन किया गया है। सम्पूर्ण ऋग्वेद के 800 मन्त्र या मन्त्रान्श ग्रहण किए हैं। मन्त्रों का अर्थ करने में वे प्रायः कठिन शब्दों के लौकिक पर्याय देते हैं अथवा उन शब्दों का निर्वचन करके उनका अर्थ बताते हैं। इस कार्य में आवश्यकतानुसार मन्त्र का उचित अर्थ प्राप्त हो सके इसके लिए वे इतिहासएवं प्राचीन आख्यान का भी उल्लेख करते है। मन्त्र का अर्थ करते समय मन्त्र के शब्दों के स्वरूप या उसके निर्वचन में अन्य आचार्यों से मतभेद होने पर, उसकी भी चर्चा करते हैं। अन्त में समीक्षा करके तत्वनिर्णय करते हैं। मन्त्रों के अर्थ में यदि दृष्टि–भेद से अंतर आता है तो वह उन दृष्टिकोणों से भी मन्त्रों का अर्थ करते हैं। यास्क जहाँ निर्वचन की आवश्यकता अनुभव नहीं करते, उसे वैसे ही छोड़ देते है। देवविद्या को भी यास्क ने दो भागों में बांटा है। प्रथम भाग में देवताओं से संबंधित आधारभूत सिद्धांतों का वर्णन और द्वितीय भाग में वैदिक देवताओं का स्वरूप निरुपण हुआ है। यास्क ने देवताओं के नामों का आधियज्ञिक, आधिदैविक और आधिभौतिक दृष्टि से निर्वचन किया है। उदाहरण के लिए अग्नि देवता का निर्वचन करते हुए यास्क कहते हैं– अग्नि अग्रणी भवति तथा अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते अर्थात् सभी देवताओं में अग्रणी होने के कारण यह देवता अग्नि है और यज्ञों में सर्वप्रथम इस का प्रणयन किये जाने के कारण यह अग्नि है। ये दोनों निर्वचन उसके आधिदैवत स्वरूप को प्रकट करते हैं। अंगं नयति सन्नममानः, आ अक्नोपो भवतीति स्थौलाष्ठीविः। ये दोनों निर्वचन अग्नि के आधिभौतिक स्वरूप को प्रकट करते हैं। यास्क के मत में देवता कोई अलौकिक वस्तु नहीं, अपितु प्रत्यक्ष दिखलाई देने वाले अग्नि, वायु सूर्य आदि पदार्थ हैं तथाएक आत्मा की भिन्न–भिन्न विभूतियाँ हैं। अग्नि, इन्द्र आदि विभिन्न नाम अलग अलग कर्मों के सम्पादन के कारण पड़े हैं।

निर्वचन को भी यास्क ने दो भागों में विभाजित किया है। निर्वचन के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए प्रथम अध्याय में उपोद्घात तथा दूसरे अध्याय में निर्वचन के सिद्धान्त और निर्वचन शास्त्र के अधिकारी की चर्चा है। तत्पश्चात् शब्दों की यथाक्रम व्याख्या है। शब्द–निर्वचन में शब्दों की प्रकृति तथा उनमें होने वाले विकार को ध्यान में रखकर वर्णसाम्य की दृष्टि से निर्वचन है और अर्थ निर्वचन के अन्तर्गत अर्थ–साम्य के आधार पर शब्दों का निर्वचन है। निरुक्त के **प्रथम अध्याय** में पदों के चार विभाग – नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपातएवं निरुक्त के प्रयोजनों की चर्चा है। **द्वितीय अध्याय** के प्रारम्भ में निर्वचन के सिद्धान्तों का निरूपण हुआ है तथा इसी अध्याय के द्वितीय पाद से गौ शब्द से शब्दों का निर्वचन प्रारम्भ हो गया है। यहाँ से लेकर **तीसरे अध्याय** तक का नाम नैघण्टुक काण्ड है। **चौथे अध्याय** का नाम नैगम काण्ड है। इसमें विभिन्न शब्दों के निर्वचन हैं। **सातवें अध्याय** से दैवत–काण्ड प्रारम्भ हुआ है जिसमें देवताओं के स्वरूप का वर्णन है। इसके अतिरिक्त यहॉ पर भक्ति–साहचर्यएवं अग्निभक्ति, इन्द्रभक्ति, आदित्यभक्ति–साहचर्य का वर्णन तत्पश्चात् गायत्री आदि वैदिक छन्दो का निर्वचन है। **आठवें अध्याय** में आप्री देवताओं के साथ कुछ विशिष्ट देवताओं और अन्त में उषा आदि वैदिक देवियों का वर्णन है। **नवें अध्याय** में लौकिक शब्दों के निर्वचन हैं। **दसवें और ग्यारहवें** अध्याय में

अन्तरिक्षस्थानीय देवताओं के नामों का निर्वचन है। **बारहवें** अध्याय में द्युस्थानीय देवताओं के नामों का निर्वचन हुआ है। **तेरहवें अध्याय** में अग्नि, वरुण, इन्द्र और आदित्य, अश्विनौ, सोम, यज्ञ, वाक् इत्यादि महत्वपूर्ण देवताओं का निर्वचन है। अन्तिमएवं **चौदहवें अध्याय** में सृष्टि की उत्पत्ति सहित अनेक लौकिक विषयों का वर्णन प्राप्त होता है।

निरुक्त में लगभग उन्नीस वैदिक आख्यानों का उल्लेख हुआ है। इसमें त्रित, देवापि तथा शान्तनु, मुद्गला, भार्म्यएव, विश्वकर्मा, भौवन, विश्वामित्र–नदी –संवाद और सरण्यू तथा विवस्वान् येऐतिहासिक आख्यान हैं। यम तथा यमी संवाद, वृत्त तथा वर्तिका, सरमा और पणि संवाद को आख्यान कहते हैं। इसके अतिरिक्त अगस्त्य और इन्द्र, इन्द्र तथा वृत्र, उर्वशी तथा मैत्रावरुण, वसिष्ठ, कुरुंग, ग्रत्समद तथा कपिञ्जल, च्यवन–च्यवान, जालबद्ध मत्स्य, दक्ष और अदिति, भग का अन्धत्वएवं श्येन तथा सोम आख्यान को बिना किसी नामोल्लेख के प्रस्तुत किया है। सत्य यह है कि आचार्य यास्क उपर्युक्त आख्यानों को अर्थवाद प्रशंसापरक अथवा उपमार्थक मानते है। मन्त्रों का साक्षात्कार करने वाले ऋषियों को आख्यान प्रिय थे इसलिए उन्हानें मन्त्रों में स्थित रहस्यात्मक अर्थ से भिन्न मुख्यार्थ के रूप में आख्यानों को प्रस्तुत किया है।

2.4.1 पदविभाग

निरुक्त में पद के चार प्रकार बताए गए हैं –नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात। इनको हम पद की जातियाँ भी कह सकते हैं।

- **नाम –**

  नाम का लक्षण है– सत्वप्रधानानि नामानि अर्थात् जिसमें सत्व की प्रधानता होती है वे नाम कहलाते हैं। सत्व का अर्थ है– द्रव्य जो वस्तु मात्र का बोधक होता है। नाम पदों में इसी द्रव्य का प्राधान्य रहता है । जैसेघटः, पटः और धनम् इत्यादि। द्रव्यों के बोधक मूल शब्द प्रतिपादिक होते हैं जिनमें सुप् विभक्तियाँ लगती हैं तथा लिङ्ग और वचन का बोध होता है। व्याकरण शास्त्र में यही सुबन्त कहे जाते है। जैसे– देवदतः।

- **आख्यात–**

  भावप्रधानमाख्यातम् अर्थात् जिसमें भाव की प्रधानता होती है, उसे आख्यात कहते हैं। भाव का अर्थ है– क्रिया। जैसे – पठति। इसमें पढ़ने की क्रिया का बोध होता है। आख्यात क्रियावाचक होता है इसलिए इसमें लिङ्गभेद नहीं होता है किन्तु इसमें प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष, उत्तम पुरुष तथा तीनों वचन होते हैं। यहॉ पर साध्यावस्था की क्रिया का वर्णन होता है, जब कि नाम में सिद्धावस्था की क्रिया का बोध होता है। आख्यात के उदाहरण हैं– पचति , गच्छति, पठति और लिखति इत्यादि।

इस क्रिया के छह विकार बताये गये हैं –

क. **जायते –** जायते इति अर्थात् उत्पन्न होता है। यह अवस्था क्रिया के प्रारम्भ को बताती है किन्तु दूसरी कोई क्रिया अस्तित्व में है, न इसको बतलाती है और न ही इसका निषेध करती है।

ख. **अस्ति –**अस्ति इति अर्थात् अस्तित्व में है। यह अवस्था उत्पन्न हुई वस्तु की विद्यमानता को कहता है किन्तु अपनी परवर्ती क्रिया विकार को न तो बताती है

और न विरोध करती है।

ग. **विपरिणमते** – विपरिणमते अर्थात् परिवर्तित होता है। दूसरे शब्दों में यह परिवर्तन की अवस्था के प्रारम्भ को कहता है। यह क्रिया अपने परवर्ती क्रिया को न बतलाती है और न निषेध करती है।

घ. **वर्धते**– वर्धते इति वृद्धि को प्राप्त करता है। यह क्रिया अङ्गों की वृद्धि को अथवा पदार्थों की वृद्धि को कहती है तथा परवर्ती क्रिया का न तो कथन करती है और न निषेध करती है।

ङ. **अपक्षीयते** – अपक्षीयते अर्थात् क्षीण होता है। यह क्रिया अङ्गों के अथवा पदार्थों की क्षीणता का कथन करती– है। यह अपनी परवर्ती क्रिया का न कथन करती है और न निषेध करती है ।

च. **विनश्यति**–अर्थात् नष्ट होता है यह विनाश के प्रारम्भ को बताती है। यह अपने पूर्ववर्ती क्रिया को न कहती है और न निषेध करती है ।

इस प्रकार से किसी भी वस्तु के छह क्रिया – विकार होते हैं। यह आचार्य वार्ष्यायणि का मत है, जिसे यास्क ने अपने निरुक्त में उद्धृत किया है।

- **उपसर्ग**– यास्क आ, प्र, परा, अभि, प्रति और परि इत्यादि बीस उपसर्ग मानते हैं, जो नाम और आख्यात आदि में जुड़ कर अर्थ की वृद्धि कर देते हैं।
- **निपात**– ये अलग अलग अर्थों में कहीं भी गिरते है या प्रयोग होते हैं, इस लिए इन्हें निपात कहते हैं। यास्क ने निरुक्त में मन्त्रों में प्रयुक्त निपातों का उदाहरण देकर उनके अर्थों पर विचार किया है।

2.5 निर्वचन सिद्धान्त

यास्क के अनुसार वैदिक पदों के वास्तविक अर्थ को प्राप्त करने के लिए सदैव प्रयास करना चाहिए। इसके लिए कुछ निश्चित नियमों का पालन अनिवार्य है। यास्क ने स्वयं भी उन्हीं नियमों का आश्रय लेकर निघण्टु के पदों का निर्वचन किया है। संक्षेप में वे नियम इस प्रकार से हैं –

कोई शब्द व्याकरण के नियमों से सरलतापूर्वक व्युत्पन्न हो रहा हो उसमें उदात्त –अनुदात्तएवं स्वरित आदि स्वर तथा व्याकरण की दृष्टि से लगने वाले प्रत्ययएवं धातु परिवर्तन में कोई बाधा न हो तो उसका व्याकरण के अनुसार निर्वचन करना चाहिए।

यदि स्वरएवं व्याकरण की प्रक्रिया शब्द के अर्थ के अनुकूल न हो तथा उचित धातु विकार भी न हो तबऐसी दशा में शब्द के प्रचलित अर्थ को आधार बना कर वर्ण की वृत्तियों के आधार पर परीक्षण करते हुए, शब्द का निर्वचन करना चाहिए।

यदि किसीऐसे शब्द का निर्वचन करना है जिसमें किसी भी वृत्ति के अर्थ में कोई समानता न हो।ऐसाी दशा में उस शब्द के किसी अक्षर से युक्त अन्य शब्द अथवा उसके अर्थ से समानता की परख करके निर्वचन करना चाहिए। यास्क का विचार है कि प्रत्येक दशा में शब्द का निर्वचन करना चाहिए, इसके लिए व्याकरण–प्रक्रिया से बधें रहने की आश्यकता नहीं है क्योंकि किसी शब्द के शुद्धता अथवा अशुद्धता का प्रतिपादन करने वाली व्याकरण की सभी वृत्तियाँ चाहे वह कृत, तद्धित, समास या धातु में से कोई भी हों, ये पूर्ण रूप से वैज्ञानिक हैं, यह मात्र अनुमान है।

यास्क के अनुसार धातु में अकारादि स्वर के ठीक पूर्व अथवा पश्चात् अन्तस्थ वर्ण य, व, र, ल होते हैं।ऐसे स्थलों पर अर्थ सम्प्रसारण अथवा असम्प्रसारण दोनो को ध्यान में रखकर करना चाहिए।एक प्रकार से न बन सके तो दूसरे प्रकार से अर्थ कर लेना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि सामान्य रूप से इष्ट शब्द इच्छार्थक इष धातु से बना हुआ प्रतीत होता है किन्तु अर्थ देख कर लगे कि इष्ट शब्द इच्छा अर्थ में नहीं है तब इसक निर्वचन यज् धातु से कर लेना चाहिए।

वर्णों का आगम, वर्णों के आदि में अथवा अन्त में विपर्यय, वर्ण–विकार, वर्णनाश तथा किसी भी धातु का उसके भिन्न अर्थ के साथ योग–ये निरुक्त के पाँच प्रकार हैं। इनको ध्यान में रखकर ही शब्दों का निर्वचन करना चाहिए।ऐसा करना इसलिए उचित है क्योंकि उपर्युक्त सभी विकार शब्दों को अनुशासित करने वाले शब्दशास्त्र व्याकरण में भी प्राप्त होते हैं।

वेद में जो कृदन्त शब्द प्रयुक्त हुए हैं, उनमें से कतिपय बोलचाल की धातुओं से सीधे निर्मित हैं, इस प्रवृत्ति को ध्यान में रख कर निर्वचन करना चाहिए। वेद में प्रयुक्त तिङन्त रूप वाले धातुओं से बोलचाल के कृदन्त शब्द सम्बद्ध हैं। जैसे दाह करने के अर्थ वाला उष् धातु वैदिक है परन्तु इससे निर्मित उष्ण शब्द लोक में प्रचलित है। इसी प्रकारघृ धातु बहने अर्थ में वेद में प्राप्त है और उससे निर्मित 'घी' शब्द लोक में प्रचलित है।

मन्त्रों में कहीं केवल आख्यात (क्रिया रूप). का प्रयोग होता है तो कहीं उनसे निष्पन्न नामपदों का प्रयोग होता है,ऐसा देखा गया है। गति के अर्थ में शव धातु का आख्यात के रुप में कुछ विशिष्ट स्थानों (काबुल, कान्धार, बलोचिस्तान) पर होता है। जब कि आर्य प्रदेशों में 'शव' शब्द का प्रयोग मृत शरीर के लिए होता है। इन बातों को भी ध्यान में रखकर निर्वचन करना चाहिए।

2.5.1 तद्धित और समास वृत्ति से बनेएकल याएकाधिक पदों के मेल से बने शब्दों में पहले पूर्व पद का उसके बाद उत्तर पद का निर्वचन करना चाहिए। जैसे– दण्ड्यः पुरुषः में दण्ड्य का निर्वचन है –दण्ड के योग्य अथवा दण्ड से युक्त। दण्ड शब्द धारण करने के अर्थ की दद्धातु से बना है जबकि आचार्य औपमन्यव दण्ड का निर्वचन दमन अर्थ युक्त दम् धातु से मानते हैं। इस प्रकार से राजपुरुष अर्थात् राजा का आदमी। इसमें राजा स्वामी होना अर्थ में राज् धातु से और पुरुष = पुर+सद् अथवा पुर+शी अथवा पुरि धातु से निर्मित बताया जाता है। पुर का अर्थ शास्त्रों में शरीर किया गया है। इसके साथ सद् धातु बैठने अर्थ में अर्थात् जो पुर में स्थित है, वह पुरुष है। शी धातु शयन अर्थ में प्रयोग होता है इसलिए जो पुर में शयन करे, वह पुरुष है। पूरि धातु भरने के अर्थ में प्रयोग होता है। इस आधार पर जो पुर में व्याप्त हो, वह पुरुष है। इस उदाहरण से स्पष्ट है कि अर्थ को ध्यान में रख कर व्याकरण की वृत्ति तद्धित और समास द्वारा निर्वचन करना चाहिए।

एक शब्द अलग अलग स्थितियों में भिन्न –भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होने लगता है,ऐसी स्थिति में अनिवार्य हो जाता है कि निर्वचन करते समय उन सभी अर्थो का ध्यान रखा जाए। जिन शब्दों के अर्थ लगभगएक जैसे होते हैं उन शब्दों का निर्वचन भीएक जैसा ही करना चाहिए। निरुक्त के आचार्य अर्थानुकूल व्याकरण–प्रक्रिया वाले और धातुगत अर्थ से युक्त शब्द को प्रत्यक्षवृत्ति की श्रेणी में रखते हैं। अर्थ के अनुकूल न होने तथा व्याकरण प्रक्रिया के स्पष्ट न होने पर दूसरे शब्दों में यदि शब्द में उसके मूल का विकार स्पष्ट रूप से न दिखाई पड़ता हो तो ये शब्द परोक्षवृत्ति की श्रेणी मे आते हैं।

प्रत्यक्षवृत्ति शब्दों में कृदन्त शब्दों की अपेक्षा तद्धित तथा समासवृत्ति से निष्पन शब्द अधिक क्लिष्ट होते हैं। अतः शब्द की वृत्ति का निश्चय करके उस वृत्ति के अनुसार शब्द के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसके अवयव शब्दों का निर्वचन किया जाना चाहिए। अपरोक्षवृत्ति शब्द के अर्थ से मिलते जुलते तथा उसमें विद्यमान अक्षरों अथवा वर्णों से युक्त किसी अन्य शब्द से उस शब्द का निर्वचन कर लेना चाहिए।ऐसे शब्दों के निर्वचन में अर्थ के साथ –साथ अक्षरों के ध्वनि समानता पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। बहुत से शब्दों का विद्यमान स्वरूप उनके मूल से ध्वनियों की दृष्टि से बहुत बदल जाता है। कभी–कभी यह बदलाव इतना बड़ा होता है कि विश्वास करना मुश्किल हो जाता है।

प्रत्यक्षवृत्तियुक्त विद्यमान शब्द में आधारभूत शब्द सम्बन्धी अक्षरों का लोप हो जाता है यह लोप शब्द के आदि मध्य और अन्त कहीं भी हो जाता है। बोलते समय वर्णो को खा जाने के आदत से मध्यम वर्ण का लोप हो जाता है यह भी देखा जाता है किएक समान कई ध्वनियाँ हों तो उनमें से किसीएक ध्वनि का लोप हो जाता है। शब्दों के उच्चारण पर देश–काल भेद आदि अनेक कारणों से प्रभाव पड़ता है। परिणामस्वरूप कुछ समय बाद मूल ध्वनि स्थायी रूप से बदल जाती है। यह बदलाव विकार के रूप में देखा गया है। यास्क ने भाषा की स्वच्छन्द प्रकृति को भी ध्यान रखने पर बल दिया है। सामान्य रूप से शब्दों के प्रयोग में लोग अत्यधिक स्वच्छन्दता बरतते हैं इसका परिणाम यह होता है कि कभी नामपद अप्रचलित रह जाते हैं और उनका क्रियापद प्रचलन में आ जाता है। इसके विपरीत कभी क्रियापद अप्रचलित रह जाता है और नामपद पर व्यवहार में आ जाता है। निर्वचन करते समय इस लोकव्यवहार का ध्यान भी रखना चाहिए। नैरुक्त को व्याकरण शास्त्र से अभिज्ञ रहते हुए भी शुद्धरूप से वैयाकरण नहीं बनना चाहिए अर्थात् व्याकरण की प्रक्रिया के प्रति अतिशय अनुराग नहीं होना चाहिए। यास्क का मानना है कि जब तक शब्द का अर्थ विदित न हो तब तक मात्रएक या दो प्रसंग के आधार पर शब्द का निर्वचन नहीं करना चाहिए। प्रकरण बदलने पर प्रायः शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं।ऐसी स्थिति में प्रकरण के अनुसार अलग –अलग रीति से शब्दों का निर्वचन करना चाहिए। निर्वचन कीएक महत्वपूर्ण दृष्टि यह है कि शब्दों की किसी अर्थ में प्रवृत्ति उनके बनावट के आधार पर सर्वत्र नहीं होती। प्रायः किसी अर्थ में शब्द के प्रचलित हो जाने पर उस अर्थ से किसी प्रकार की समानता को देखकर, उस अर्थ से मिलते जुलते दूसरे अर्थ में यह शब्द प्रयोग होने लगता है। यास्क इसे सामान्य का नाम देते हैं। अतः शब्द का अर्थ समझते समय सामान्य सादृश्य के इस सिद्धांत पर दृष्टि रखना आवश्यक है।

2.6 कतिपय महत्वपूर्ण पदों का निर्वचन

2.6.1 निघण्टु– निघण्टवः कस्मात् – निघण्टु को निघण्टु क्यों कहा जाता हैं?

- निगमा इमे भवन्ति – क्योंकि ये शब्द निश्चय से अर्थ का बोध कराने वाले होते हैं। अतः इनका नाम निघण्टु पड़ा।
- छन्दोभ्यः समाहृत्य समाहृत्य समाम्नाताः क्योंकि ये गौ आदि शब्द मन्त्रों से चुन –चुनकरएकत्र किए गए हैं। अतः इनका नाम निघण्टु पड़ा।
- ते निगन्तवएव सन्तो निगमनान्निघण्टव उच्यन्त इति औपमन्यव :– ये शब्द निश्चय पूर्वक अर्थ का बोध कराने के कारण निगन्तु ही होते हुए निघण्टु कहे जाने लगे।

2.6.2 गौ– गौः कस्मात् – गौ को गौ क्यों कहते हैं?

- गौरिति पृथिव्याः नामधेयम्, यद् दूरङ्गता भवति – यह पृथिवी का नाम है। –क्योंकि यह दूर तक गई हुई है।
- यच्च अस्यां भूतानि गच्छन्ति क्योंकि इसपर प्राणी गति करते हैं।
- गातेर्वौकारोनामकरणः – गाङ्गतौ धातु से ओकार प्रत्यय करके गो बन जाएगा।

2.6.3 आचार्यः–आचार्यः कस्मात्–आचार्य को आचार्य क्यो कहते है?

- आचार्यः आचारं ग्राहयति – क्योंकि वह विद्यार्थी को आचार सिखाता है।
- आचिनोत्यर्थान् – पदों के अर्थों को चुनता है और सूक्ष्म से सूक्ष्म पद के अर्थ का विद्यार्थी को दर्शन कराता है।
- आचिनोति बुद्धिमिति – क्योंकि आचार्य विद्यार्थी में बुद्धि का संचय करता है, उसे बढ़ाता है, इसलिए उसको आचार्य कहते हैं।

2.6.4 समुद्रः कस्मात् – समुद्र को समुद्र क्यों कहते हैं ?

- समुद् द्रवन्ति अस्मादापः – क्योंकि इससे जल तरङ्गों के रूप में उठते हैं।
- समभिः द्रवन्तिएनमापः क्योकि इसमें जल सब ओर इकट्ठे होकर अभिमुख हो कर प्राप्त होते हैं।
- सम्मोदन्तेऽस्मिन् भूतानि –क्योंकि इसमें जलचर प्राणी खुश होते हैं।
- समुद्को भवति – क्योंकि यह बहुत जल वाला है। उद, यह जल का वाचक है।
- समुनत्तीति वा क्योंकि यह भिगोता है इसलिए समुद्र है।

2.6.5 अग्निः – अग्निः कस्मात् – अग्नि को अग्नि क्यों कहते हैं?

- अग्रणीः भवति –क्योंकि यह सभी देवताओं में अग्रणी होता है।
- अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते– क्योकि यज्ञों में सर्वप्रथम वही ले आया जाता है।
- अङ्गं नयति समन्नममानः – क्योंकि वह काष्ठ आदि को अपना अङ्ग बना लेता है।
- अक्नोपनो भवतीति स्थौलाष्ठीविः स्थौलाष्ठीवि आचार्य का कहना है क्योंकि यह अक्नोपन होता है अर्थात् इसमें नमी का अभाव होता है। न क्नोपयति न स्नेहयति –क्योंकि यह नम नहीं करता है, न स्निग्ध करता है बल्कि विरुक्षी करोति इति अर्थः– सुखा देता है इसलिए अग्नि कहा जाता है।

2.7 निरुक्त में वर्णित वेदार्थ पद्धति

निरुक्त नामक वेदाङ्ग कीएक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उसमें भिन्न –भिन्न प्रकार से वेदार्थ करने वाले सम्प्रदायों का वर्णन है। ये सम्प्रदाय हैं– याज्ञिक,ऐतिहासिक, आख्यानपरक, नैरुक्त, अधिदैवत, परिव्राजक, अध्यात्म, वैयाकरण और विधिपरक। इन वेदार्थ–सम्प्रदायों को जानने से आप सबको निरुक्त नामक वेदाङ्ग को समझने में सहायता मिलेगी।

2.7.1 याज्ञिक

प्राचीन काल में लगध आदि अधिकांश आचार्यों का दृढ़विश्वास था कि वेदों का मुख्य प्रयोजन यज्ञादि अनुष्ठान को सम्पन्न कराना है। आचार्य सायण, उव्वट, महीधर के यजुर्वेद – भाष्य , स्कन्द स्वामी , उद्गीथ वेंकटमाधव और सायण के ऋग्वेद–भाष्य, माधव, भरतस्वामी तथा गुणविष्णु के सामवेद–भाष्य तथा सायण का अथर्ववेद–भाष्य ये सभी यज्ञ पद्धति के आधार पर किये गये भाष्य हैं। यह वेदमन्त्रों की व्याख्या करने वाला सबसे प्राचीन और समृद्ध सम्प्रदाय है। यास्क ने अपने निरुक्त में सात स्थानों पर याज्ञिकों का उल्लेख किया है तथा अनेक मन्त्रों की व्याख्या भी इसी पद्धति से की है। लेकिन वे स्वयं इस पद्धति को वेदार्थ जानने की सर्वोत्तम पद्धति नहीं मानते हैं।

2.7.2 ऐतिहासिक तथा आख्यान

इस संप्रदाय के आचार्य इतिहास अथवा.आख्यान को वैदिक मंत्रों के मूल में स्वीकार करते हैं और उसी के अनुसार मंत्रों की व्याख्या करते हैं यास्क नेऐतिहासिकों का तीन और आख्यान संप्रदाय का पांच स्थलों पर उल्लेख किया है। यह संप्रदाय पुराणसाहित्य के विकास के मूल में है। यास्क ने अपने ग्रंथ में कुल 19 वैदिक आख्यानों का उल्लेख किया है। इसी वर्ग केएक अन्य सम्प्रदाय नैदान का उल्लेख भी यास्क ने निरुक्त में दो स्थलों पर किया है। यास्क, दुर्गाचार्य और स्कन्द स्वामी आदि अनेक नैरुक्त इतिहास और आख्यान को प्रामाणिक नहीं मानते हैं। उनके अनुसार ये इतिहास अथवा आख्यान वेदार्थ की प्रशंसा में लिखे गए रूपकात्मक अर्थवाद हैं।

2.7.3 नैरुक्त

नैरुक्त परम्परा के आचार्य वेदमन्त्रों का अर्थ निर्वचनात्मक पद्धति से करते हैं। यास्क स्वयं इस परम्परा के हैं। सम्भवतः यास्क से पूर्व तेरह नैरुक्त–आचार्य हो चुके हैं। इनका स्थान चौदहवां माना जाता है और इनका निरुक्त इस सम्प्रदाय का उपलब्ध, उपादेयएवं लोकप्रिय ग्रन्थ है।

2.7.4 अधिदैवत

यास्क ने इस वेदार्थ पद्धति का निरुक्त में पांच बार उल्लेख करते हुए, इस पद्धति के अनुसार कुछ मंत्रों की व्याख्या की है। अधिदैवतपद्धति में वैदिक मन्त्रों का अर्थ देवताओं को केन्द्र में रख कर किया जाता है। इस पद्धतिएवं नैरुक्त पद्धति में अत्यधिक समानता दिखाई पड़ती है।

2.7.5 परिव्राजक तथा अध्यात्म

निरुक्त में यास्क ने परिव्राजक – सम्प्रदाय का उल्लेख मात्रएकबार किया है। यह सम्भवतः सन्यासियों का सम्प्रदाय था, जो वेदमन्त्रों की वैराग्यपरक व्याख्या करता था। यास्क ने अध्यात्म सम्प्रदाय का भी उल्लेख किया है तथा कुछ मन्त्रों की व्याख्या इस रीति से भी की है। निरुक्त के टीकाकार स्कन्दस्वामी परिव्राजक और अध्यात्मपद्धति दोनों कोएक मानते हैं क्योकि दोनों पद्धतियॉ वेदमन्त्रों की रहस्यात्मक, आध्यात्मिक और दार्शनिक व्याख्या करती हैं।

2.7.6 वैयाकरण

निरुक्त में वैयाकरणों के मत का भी उल्लेख है। निरुक्त के परिशिष्ट भाग में ऋग्वेद 1/164/45 संख्या वाले मन्त्र की व्याख्या व्याकरण शास्त्र के आधार पर हुई है।

2.7.7 विधि

यास्क ने वसिष्ठ आदि आचार्यों के मतों का संकेत करते हुए सम्पत्ति आदि के उतराधिकार के प्रसङ्ग में ऋग्वेद के कुछ मन्त्रों की व्याख्या की है।

स्पष्ट है कि यास्क के पूर्व भी वेद मन्त्रों की व्याख्या विविध दृष्टियों से हो रही थी। यास्क ने अनेक मन्त्रों की व्याख्या याज्ञिक दृष्टि तथा कुछ मन्त्रों की व्याख्या अधिदैवतएवं अध्यात्मपद्धति से की है। उस समय अधियज्ञ, अधिदैवत और अध्यात्म ये तीन ही वेदार्थ पद्धतियाँ प्रमुख थीं।

2.8 निरुक्त में देवताओं का स्वरूप

आप सब जानते है कि देवविद्या निरुक्त का प्रधान प्रतिपाद्य है। सातवें अध्याय में वैदिक देवविज्ञान की भूमिका है। यास्क आदि आचार्यों का दृढ़ मत है कि प्रत्येक मन्त्र का कोई न कोई देवता होता ही है। मन्त्रों में देवताओं को पहचानने के लिए उन्होंने मन्त्रों को तीन वर्ग बनाये हैं –

- परोक्षकृत मन्त्र – इस वर्ग में वे मन्त्र आते हैं, जिनमें प्रथम पुरुष की क्रियापदों का प्रयोग है।
- प्रत्यक्षकृत मन्त्र – इस वर्ग के मन्त्रों में क्रियापद मध्यम पुरुष में प्रयुक्त है।
- आध्यात्मिक मन्त्र – इस वर्ग के मन्त्रों में क्रियापद उत्तम पुरुष के रूप में दिखाई पड़ती है।

ऋचाओं का यह वर्गीकरण अत्यन्त वैज्ञानिक है। निरुक्त में सामान्य जन के लिए देवता के अधियज्ञिय, आधिदैविक, आधिभौतिक तीनों रूपों का वर्णन है। देवता शब्द का निर्वचन है – ये दान देने, प्रकाशित होने, प्रकाशित करने अथवा द्युलोक में रहने के कारण देवता कहे जाते हैं –**"देवो दानाद् वा दीपनाद् वा द्योतनाद् वा द्युस्थानो भवतीति वा।"**

मन्त्रों का अध्ययन करते समय ऋषि छन्द, विनियोग के साथ ही देवता तत्त्व को भी प्रयत्न पूर्वक जानना चाहिए तभी वैदिक मन्त्रों का प्रयोग सार्थक सिद्ध होगा। "ऋषि जिस कामना को लेकर जिस देवता की प्रधानता चाहते हुए स्तुति करता है, उसी देवता का वह मन्त्र होता है।" जिन मन्त्रों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से देवता का उल्लेख नहीं है उस मन्त्र का जिस यज्ञ अथवा यज्ञाङ्ग में विनियोग हो रहा हो, उस यज्ञ अथवा यज्ञाङ्ग का देवता ही मन्त्र का देवता होता है। आचार्य शौनक ने भी अपने ग्रन्थ वृहद्देवता में इस बात को स्वीकार किया है। यज्ञ से भिन्न अन्य स्थानों पर याज्ञिक सम्प्रदाय के लोग प्रजापति को और नैरुक्त नाराशंस को देवता मानते हैं। मन्त्रों में कहीं–कहीं देव भिन्न वस्तुओं की भी देवता के समान स्तुति देखी गई है। जैसे अश्व या औषधिया, दृषद् –उपल इत्यादि। वेद में बहुसंख्यक देवताओं का उल्लेख है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में तैंतीस देवताओं तथा यजुर्वेद की वाजसनेयिसंहिता में देवताओं की संख्या 3339 बताई गई है। यास्क का मानना है कि अपनी महिमा के कारणएक ही आत्मा का वर्णन भिन्न–भिन्न देवताओं के रूप में दिखलाई पड़ता है। तात्पर्य यह हैं कि ऋषिगण उसएक ईश्वरीय सत्ता को ही इन्द्र, मित्र, वरुण इत्यादि नामों से पुकारते हैं।

यास्क के मत में तीन प्रधान देवता हैं –पृथिवीस्थानीयदेवता–अग्नि। अन्तरिक्ष स्थानीयदेवता– इन्द्र अथवा वायु **और** द्युस्थानीयदेवता–सूर्य।

निरुक्त में देवताओं का स्वरूप के संबंध में तीन विचारधाराएं हैं। प्रथम विचार धारा के अनुसार देवता मनुष्यों के समान होते हैं और उनकी स्तुति चैतन्य प्राणियों के समान की जाती है। इसीलिए इंद्र की मन्त्रात्मकस्तुति में उसकी दोनों भुजाओं की प्रशंसा की गई है। दूसरी विचारधारा के अनुसार देवताओं का स्वरूप मनुष्यों के समान नहीं है। जैसे अग्नि, वायु, सूर्य, पृथ्वी और चंद्रमा आदि का भौतिक स्वरूप। तीसरी विचारधारा के अनुसार मन्त्रों में जड वस्तुओं की स्तुति चेतन प्राणियों के समान की गई है क्योंकि उनका स्वरूप उभयात्मक है।

निरुक्त के सप्तम अध्याय में अग्निएवं पृथिवीस्थानीय देवोंएवं उनसे सम्बन्धित वस्तुओं का वर्णन है। जैसे– अग्नि का सम्बन्ध पृथिवीलोक, प्रातःसवन, वसन्तऋतु, गायत्री छन्द, रथन्तर साम, अग्नायी तथा इला आदि स्त्रियों से है। इनका प्रमुख कार्य हविर्वहन तथा यज्ञ में देवताओं का आह्वान बताया गया है। इन्द्रदेवता से सम्बन्धित वस्तुएं हैं–अन्तरिक्षलोक, माध्यन्दिन सवन, ग्रीष्मऋतु, त्रिष्टुप्छन्द, वृहत्साम, अन्य अन्तरिक्षस्थ देवता तथा अन्तरिक्षस्थ स्त्रियाँ। इनका प्रमुख कर्म है – रसानुप्रदान, वृत्रवध तथा बलविषयक अन्य कृत्य। आदित्य से सम्बद्ध वस्तुएँ तथा कार्य है – स्वर्गलोक , तृतीयसवन, वर्षाऋतु, जगतीछन्द, वैरूपसामएवं स्वर्ग की स्त्रियाँ। इनका प्रमुख कार्य किरणों द्वारा रसग्रहण इत्यादि है।

निरुक्त के देवविज्ञान की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं इस प्रकार हैं। जैसे यहॉ पर अग्नि के जातवेदस्एवं वैश्वानर, द्रविणोदा (बल या धनप्रदान करने वाला) स्वरूपों का देवताओं के रूप में वर्णन है। आप्री देवताओं के रूप में इध्म (यज्ञ का ईन्धन) तनूनपात् (अग्नि अथवाघृत) नाराशंस, इड, बर्हि (कुशा), द्वार, उषासानक्ता (उषा और रात्रि), दैव्या , होतारा (अग्नि के भिन्न स्वरूप), इडा, भारती और सरस्वती नामक देवियों के साथ त्वष्टा, द्यावापृथिवी, वनस्पति तथा स्वाहाकृतियों का भी उल्लेख है। इसके साथ ही अश्व, शकुनि, मण्डूक, अक्षु, रथ, दुन्दुभि आदि का भी देवताओं के रूप में वर्णन प्राप्त है। गंगा, यमुना आदि नदियों, औषधियों, रात्रि, अरण्यानी, श्रद्धा, पृथिवी, अग्नायी संज्ञक देवियों के नामों का निर्वचन हुआ है। कुछ लौकिक देवता जैसे क्षेत्रस्पति, वास्तोस्पति, वाचस्पति, मन्यु, दधिक्रा, वेन, ऋत, श्येन, सोम, चन्द्रमा, मृत्यु, ऋभुगण, आङ्गिरस, पितरोंएवं भृगुओं का भी वर्णन हुआ है।

2.9 सारांश

स्पष्ट है कि निरुक्त में वेद मन्त्रों के वास्तविक अर्थ को समझने के लिए वैदिक पदों का अनेक प्रकार से निर्वचन किया गया है। ये निर्वचन और निर्वचन की विधियाँ ही निरुक्त का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। यास्क ने निघण्टु में संकलित पदों का निर्वचन करते हुए कुछ विशिष्ट मन्त्रों की व्याख्या भी की है। निघण्टु का प्रथम शब्द गो और अन्तिम शब्द देवपत्नी है। यास्क ने निघण्टु के 230 शब्दों की उनके धातु के अनुसार व्याख्या की है और साथ में बहुत से पदों की व्युत्पत्तियाँ भी दी हैं। यास्क द्वारा रचित निरुक्त से सम्बन्धित निघण्टु के रचनाकार को लेकर आचार्यों में मतभेद है। निघण्टुओं में शाकपूणि का निघण्टु सबसे प्रसिद्ध है। आचार्य मधुसूदन सरस्वती ने यास्क को ही निघण्टु का रचयिता माना है। उन्होंने पहले वैदिक शब्दों को चुन–चुन करएकत्र किया, तत्पश्चात् उन चुने हुए शब्दों का निर्वचन किया। यास्क ने देवताओं से संबंधित आधारभूत सिद्धांतों की चर्चा की है। जिसके अन्तर्गत वैदिक देवताओं का स्वरूप निरुपण हुआ है। यास्क के मत में देवता कोई अलौकिक वस्तु नहीं, अपितु प्रत्यक्ष दिखलाई देने वाले अग्नि, वायु, सूर्य आदि पदार्थ ही हैं। ये सब देवता उनके मत

मेंएक आत्मा की विभूतियाँ हैं।

निर्वचन के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने प्रथम अध्याय में उपोद्घात तथा दूसरे अध्याय में निर्वचन के सिद्धान्त और निर्वचन शास्त्र के अधिकारी की चर्चा की है। यास्क ने जिन सिद्धातों के आधार पर वैदिक शब्दों का निर्वचन किया है उसमें से कुछ प्रमुख हैं – जिन शब्दों में स्वर और व्याकरण सम्बन्धी प्रत्यय से होने वाले परिवर्तन अर्थ के अनुकूल हों तो शब्दों का निर्वचन व्याकरण के अनुसार करना चाहिए। जब स्वर और उच्चारण की प्रक्रिया शब्द के अर्थ के अनुकूल न हो तथा उचित धातु का विकार भी नहीं हो, तब उस शब्द के प्रचलित अर्थ को आधार बना कर उसकी कृत्, तद्धितधातु, समास आदि वृत्ति की समानता के आधार पर निर्वचन करना चाहिए किन्तु यदि निर्वचनीय शब्द और उसमें सम्भावित किसी भी वृत्ति में से किसी के साथ अर्थ की समानता न हो तोऐसी दशा में उस शब्द के किसी वर्ण या अक्षर की अन्य वर्ण या अक्षर से समानता ढूढकर निर्वचन करना चाहिए।

अर्थ का परिज्ञान कराने के कारण निरूक्त अन्य वेदांगों की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण स्थान रखता है क्योंकि अर्थ प्रधान होता है और शब्द गौण होता है। शब्द और अर्थ के निर्वचन का ज्ञान निरुक्त द्वारा सम्भव है। निरुक्त के अनुसार सभी शब्द किसी न किसी धातु से बने होते हैं। इस कारण से शब्द चाहे नाम हों अथवा आख्यात धातु से व्युत्पन्न हैं। यही आधुनिक भाषा विज्ञान का मूल विचार है। निरुक्त भाषाशास्त्र की दृष्टि सेएक अनुपम रत्न है।

यास्क ने अपने पूर्ववर्ती 12 निरुक्तकारों के नामएवं उनके निर्वचन संबंधी विचारों को अपने निरुक्त में स्थान दिया है। इस कारण से यह ग्रन्थ और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। किंतु इसको समझने के लिए अनेक आचार्यों के द्वारा इसकी टीका लिखी गई है। निरूक्त की प्रसिद्ध टीका है–दुर्गाचार्यवृत्ति, स्कंदमहेश्वर रचित निरुक्त टीका–'स्कन्द महेश्वरवृत्ति'। निघण्टु पर देवराज यज्वा का भाष्य उपलब्ध है, जिसमें पदों की व्याख्या में पाणिनीय–व्याकरण और भोजराज–व्याकरण से सहायता ली गई है। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी, हिंदी और अन्य प्रादेशिक भाषाओं में भी निरुक्त के अध्ययन और अनुवाद हुए हैं। निरुक्त के अध्येताओं में रॉथ सत्यव्रत शामश्रमिक, स्कोल्ड, विष्णुपद भट्टाचार्य, वीके राजवाड़े, डॉ लक्ष्मण स्वरूप, सिद्धेश्वर वर्मा तथा शिव नारायण शास्त्री का नाम मुख्य है। वैदिक ग्रंथों में सर्वाधिक संस्करण निरुक्त के ही प्रकाशित हैं। निरुक्त का अध्ययन प्राचीन काल में जितना महत्वपूर्ण था वेदों के भाष्य की दृष्टि से आज भी उतना ही प्रासंगिक है।

2.10 पारिभाषिक शब्दावली

संहिता–वेदों के मन्त्रभाग को संहिता के नाम से जाना जाता है। जैसे ऋग्वेदसंहिता, यजुर्वेदसंहिता, सामवेदसंहिता तथा अथर्ववेदसंहिता।

ब्राह्मण–वेदों के मन्त्रभाग की गद्यात्मक व्याख्या करने वाला भाग ब्राह्मण कहलाता है। सभी वेदों के अपने ब्राह्मणग्रन्थ हैं। प्रमुख ब्राह्मणों के नाम हैं –ऐतरेयब्राह्मण, शतपथब्राह्मण, तैत्तीरीयब्राह्मण, ताड्यब्राह्मण, गोपथब्राह्मण।

आरण्यक– ब्राह्मणभाग का उत्तरवर्तीभाग आरण्यक है। इसमें प्राणविद्या का वर्णन हुआ है।

उपनिषद् – वेदों के अन्तिमभाग को वेदान्त अथवा उपनिषद् कहते हैं। इसमें

ब्रह्मविद्या, आत्माएवं सृष्टि वर्णन इत्यादि का प्रतिपादन प्रमुख रूप से हुआ है।

नैरुक्त – निरुक्त की रचना करने वाले सभी आचार्य।

वैयाकरण – व्याकरण के आचार्य जैसे –महर्षिपाणिनि, वररूचिकात्यायन, पतञ्जलि आदि।

प्रातिपदिक – जिसमें सुप् प्रत्यय अथवा तिङ् प्रत्यय लगता है,ऐसे सभी सार्थक शब्द जो न तो धातु होते हैं और न ही प्रत्यय।

याज्ञिक – यज्ञ से संबंधित अथवा यज्ञ करने और कराने वाले।

सम्प्रसारण – य,व,र,ल के स्थान पर क्रमशः इ, उ, ऋ और लृ का प्रयोग सम्प्रसारण कहलाता है।

पद – शब्द अथवा धातु से जब प्रत्यय लग जाते हैं तब वे पद बन जाते हैं। संस्कृतभाषा में पदों का ही प्रयोग होता है। जैसे –राम शब्द है और रामः पद। इसी प्रकार गम् धातु है और गच्छति पद।

वृत्ति – पद जब अपना मूल अर्थ पूर्ण रूप या आंशिक रूप से छोड़कर, किसी विशिष्ट अर्थ को बताने लगता है तब उसे वृत्ति कहा जाता है। ये पांच होते हैं – कृदन्तवृत्ति, तद्धित्वृत्ति, समासवृत्ति,एकशेषवृत्ति और सनाद्यन्तवृत्ति।

विकार – विकार का अर्थ है परिवर्तन। जब कोई वर्ण परिवर्तित होकर किसी अन्य वर्ण का रूप धारण कर लेता है तो उस नये वर्ण को पुराने वर्ण का विकार कहा जाता है।

2.11 सन्दर्भग्रन्थ –सूची

1– निरुक्त – श्रीपरमेश्वरानन्दशास्त्रि स संदृब्ध्या वेदानुबन्धि – विविध –ज्ञातव्य विषय – पूर्णतया भूमिकया सनायितम्। महामहोपाध्याय श्रीछज्जूरामशास्त्रिणाविद्यासागरेण ... श्रीभगीरथशास्त्रिणा कृतया हिन्दी व्याख्ययोपोद्वलितम् – मेहरचन्द –लछमनदास पब्लिकेशन, नई दिल्ली संस्करण –2019.

2– वेदाङ्ग द्वितीय खण्ड, संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास , उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा प्रकाशित , लखनऊ . 1997

3– निरुक्त, प्रो0 उमाशंकर शर्मा, 'ऋषि', चौरवम्भा विद्याभवन, वाराणसी

4– निरुक्त, डॉ0 जमुना पाठक, चौखम्भा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी , 2018

5– वैदिक साहित्यएवं संस्कृति, बलदेव उपाध्याय, शारदा संस्थान, प्रकाशन, वाराणसी–1993

2.12 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय

1– निरुक्तशास्त्र का वेदाङ्ग के रूप में परिचय दीजिए।

2– निरुक्त के स्वरूप पर प्रकाश डालिए।

3– निरुक्त नामक वेदाङ्ग के प्रयोजनों की विस्तार से चर्चा कीजिए ।

4– यास्क के पूर्ववर्ती निरुक्तकारों का नामोल्लेख करते हुए विभिन्न वेदार्थ पद्धतियों का निरूपण कीजिए।

5– यास्क के निर्वचन सिद्वान्त का वर्णन कीजिए।

6– निरुक्त के प्रतिपाद्य परएक निबंध लिखिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1– निरुक्त के अनुसार पदविभाग बताइए।

2– निरुक्त के प्रयोजनों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

3– निरुक्त के प्रमुख आचार्यों का उल्लेख कीजिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY